IJARSCT
ISSN (Online) 2581-9429
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)
IJARSCT
Impact Factor: 6.252
Volume 2, Issue 8, May 2022

भारतीय समाज में किन्नरों का परिवेश

Dr. Samay Lal Prajapati[1] and Nitil Tiwari[2]
Assistant Professor, Department of Hindi[1]
Research Scholar, Department of Hindi[2]
Government T. R. S. College, Rewa, MP, India

किन्नर या हिजड़ों से अभिप्राय उन लोगो से है, जिनके जननांग पूरी तरह विकसित न हो पाए हों या पुरूष होकर भी स्त्री के स्वभाव के लोग, जिन्हें पुरूषों की जगह स्त्रियों के बीच रहने में सहजता महसूस होती है। वैसे हिजड़ों को चार वर्गो में विभक्त किया जा सकता है,– बुचरा, नीलिमा मनसा और हंसा। वास्तविक हिजड़ें तो बुचरा ही होते हैं क्योंकि ये जन्मजात न तो स्त्री होते हैं न पुरूष हैं। 'नीलिमा' किसी कारणवश स्वयं को हिजड़ा बनने के लिए समर्पित कर देते हैं। 'मनसा' तन के जगह पर मानसिक तौर पर स्वयं को विपरीत लिंग या अक्सर स्त्रीलिंग के अधिक निकट महसूस करते हैं। और 'हंसा' शारीरिक कमी यथा नपुंसकता आदि यौन न्यूनताओं के कारण बने हिजड़े होते हैं। नकली हिजड़ों को अबुआ कहा जाता है जो वास्तव में पुरूष होते हैं पर धन के लोभ में हिजड़े का स्वांग रख लेते हैं। जबरन बनाये गये हिजड़े छिबरा कहलाते हैं, परिवार से रंजिश के कारण इनका लिंगोच्छेदन कर इन्हें हिजड़ा बनाया जाता है।

किन्नर एक ओर परिवार और समाज से बहिष्कार झेलता है, वहीं दूसरी ओर राज्य और राष्ट्र में उपेक्षा और अवहेलना का पात्र होता है। उनकी लैंगिक पहचान को सरकारी दस्तावेजों में मान्यता नहीं दी गयी है। सार्वजनिक सेवाओं और सुविधाओं में उनके लिए कोई विशेष प्रावधान नहीं किया जाता है। 21वीं सदी के हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श, स्त्री–विमर्श, आदिवासी –विमर्श इत्यादि पर जहॉ बल मिला, वहीं किन्नर समाज एक ऐसा समुदाय है जो समाज की मुख्यधारा से आज भी विलग या हाशिये पर है।

किन्नरों की स्थिति अत्यन्त दीन–हीन है। समाज में किन्नरों को नकारात्मक एवं हेय दृष्टि से देखा जाता है। लोग इन्हें देख कर नजरें चुराते नजर आते हैं। इनसे सम्पर्क रखना पसंद नहीं करत। 15 अप्रैल 2014 को उच्च न्यायालय द्वारा इन्हें तीसरे लिंग (Third Gender) के रूप में मान्यता प्रदान कर दी गयी , फिर भी समाज इन्हें किन्नर, हिंजरा, नपुंसक , खोजा, खुसरा, ट्रांसजेंडर, छक्का इत्यादि नामों से ही सम्बोधित करता है। आजादी के 70 वर्षो के बाद जहॉं आम समाज को आज भी शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास जैसी मूलभूल आवश्यक सुख–सुविधाओं से महरूम रखा गया है।

लोगों की खुशियों में शरीक होना, ताली बजाकर नाच–गाकर उन्हें बधाई देकर बख्शीश लेना उनकी जिन्दगी का हिस्सा बन गया है। समाज ने किन्नर समुदाय की यही सीमा तय कर रखी है। दरअसल समाज के मन में किन्नरों की एक छवि बस गयी है। खास अंदाज में ताली बजाकर नाचना–गाना और बातें करना।

किन्नरों की सबसे बड़ी समस्या पहचान है, हालांकि इन लोगों को मुख्य धारा से जोड़ने दिल्ली नगर पालिका ने इन्हें प्रतिमाह 1000 रूपया पेंशन देने की पेशकश की है, लेकिन इस मॅहगाई के दौर में इनके लिए नाकाफी ही है। किन्नरों के सहयोग के लिए आंधी–अधूरी योजनाएँ शुरू तो हुई लेकिन उन योजनाओं का अब तक कोई असर नहीं हुआ।

किन्नरों के जीवन और उनकी समस्याओं को आधार बना कर भारतीय सिनेमा में कई फिल्में बनी है। यह सत्य है कि दशकों तक किन्नरों के पात्र फिल्मों में भी हास्य का विषय रहे लेकिन समय के साथ फिल्मों में भी किन्नरों के प्रति बदली हुई मानसिकता को देखा जा सकता है। इस दृष्टि से बेलकम टू सज्जनपुर (श्याम बेनेगल), सड़क (महेश भट्ट), संघर्ष (तनुजा चन्द्रा), तमन्ना (महेश भट्ट), शबनम मौसी (आसुतोष राणा), चॉदनी (सिराज–उल–हक) इत्यादि महत्वपूर्ण फिल्में हैं।

किन्नर को आज भी समाज स्वीकार नहीं करता है, वहीं उसके घर वाले भी सामाजिक दबाव के चलते उन्हें अपना नहीं पाते। यदि किसी तरह आर्थिक रूप से सक्षम कुछ लोग समाज की नजरों से बचाकर बच्चे को अपनाने का प्रयास करते भी है तो यह प्रयास ज्यादा दिनों तक सफल नहीं हो पाता। कारण परिवार उसको रोटी, कपड़ा और मकान तो दे देता है पर उसके बदले उसकी आजादी और भावनाओं का गला घोट देता है। और यह सब परिवार की इज्जत के नाम पर होता है। जब तक बच्चा, बच्चा रहता है तब तक तो ठीक है पर जैसे ही उसके अंदर चीजों को समझने की क्षमता आ जाती है, वह गुलामी की बेड़ियों को तोड़ने के लिए बेताब हो जाता है। कोई न कोई घटना उसको ऐसा अवसर दे देती है। इस बात को बखूबी 'चॉदनी' फिल्म में दिखाया गया है। 'चॉदनी ' फिल्म की मुख्य नायिका 'चॉदनी' 'तैमूर' से कहती है कि "मैं मर्द भी नही हूॅ औरत भी नहीं हूॅ कोई मुझे हिजड़ा कोई जनखा और कोई मुझे छक्का कहता है अब ये तुमपे है तू मुझे किस नाम से पुकारता है।"[2] जब 'तैमूर' को यह ज्ञात होता है कि 'चॉदनी' उसकी अपनी बहन है लेकिन जननांग विकृति के कारण उसे किन्नर समुदाय को सौंप दिया गया था। यह जान कर वह अपने आप को मन ही मन कोसता है और सामाजिक बंधनो को तोड़कर अपनी बहन को घर लाता है। उसे उसका अधिकार दिलाना चाहता है, लेकिन वह अपने प्रयास में असफल रहता है। किन्नरों के प्रति पूर्वाग्रह से ग्रसित वर्षो पुरानी सामाजिक मानसिकता के रूप में उसकी बीबी और बहन ही उसके सामने आ खड़ी होती है।

तैमूर की बीबी नतासा कहती है–"तैमूर यह क्या मजाक है? एक हिंजड़े को बहन बनाकर घर ले आये हो, निकालो इसे बाहर घिन आती है। आप अपने–आपको एक हिंजड़े का भाई कहलवाइए फक्र से लेकिन मैं एक हिंजड़े की भावज बनकर अपना और अपने ब्यूरोक्रेट बाप का नाम मिट्टी में नहीं मिला सकती। मैं जा रहीं हूॅ। अब तभी आऊॅगी, जब ये हिंजड़ा यहॉ से जायेगा।"[3] वहीं उसकी छोटी बहन जिसे ''चॉदनी '' ने कभी अपनी गोंद में खिलाया होता है। वह यह जानती है कि चॉदनी एक किन्नर है, उसे छूने से मना तक कर देती है और कहती है कि ''ये तो हिंजड़ा है ये हमारी बहन कैसे हो सकता है पागल हो गये हो तुम यही हकीकत है गुड़िया नहीं मानती इस हकीकत को मैं, नहीं मानती।''[4]

उपर्युक्त सभी फिल्में किन्नरों की जैविक संरचना से लेकर सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक संरचना के भिन्न–भिन्न पहलुओं को सामने लाने का प्रयास करती है।

किन्नर दूसरों की खुशी में हॅसते–गाते–नाचते दिखाई देते हैं परन्तु उनके अपने निजी जीवन में जो सुख–दुःख है जिसमें वे नितांत अकेले है। 1997 ई. में बनी 'तमन्ना' फिल्म मानवीय संवेदना की अटूट गाथा है। किन्र समाज में इतने उपेक्षित हैं कि सब उन्हें हिकारत की नजर से देखते हैं। अपनी खुशी में तो शामिल करते हैं, परन्तु उनसे दूर भागते हैं।

प्रदीप सौरभ द्वारा लिखित उपन्यास 'तीसरी ताली ' असामान्य लिंगधारियों की कथा है, जिसमें 'हिजड़े', 'गे' और 'ट्रांसजेंडर' पात्र है। इस उपन्यास में हिंजड़ा होने की व्यथा बहुत ही मार्मिक ढंग से उकेरी गयी है। एक हिंजड़ा बच्चा जैसे–जैसे बड़ा होता है तो वह किन मानसिक स्थितियों से गुजरता है उसके मन के अंतद्वन्द्व को प्रदीप सौरभ ने बखूबी उकेरा है। जिसे हम विनीत की स्थिति से समझ सकते हैं– "समय बीतने के साथ गौतम साहब के बेटे में लड़कियों जैसे गुण पैदा होने लगे। शारीरिक बदलाव भी प्रखर हो गये। गौतम साहब यह सब देखकर चिंतित थे। विनीत गौतम नाम रखा था उन्होंने अपने बेटे का। विनीत घर से निकलने में कतराने लगा। बाहर निकलता तो उसके साथ खेलने वाले बच्चे भी उससे किनारा कर लेते। वह अजीब मानसिकता से गुजर रहा था। कई–कई हफ्ते घर के अन्दर बन्द रहता। उसे लगता कि उसके पिता उसे जबरिया लड़का बनाने पर तुले हैं वह अपनी बहनों की तरह ही अपने को लड़की मानता था। उसे लड़को के कपड़े पहनने में परहेज होने लगा। घर में जब कोई नहीं होता तो वह अपनी बहनो की पैन्टी–ब्रा पहन लेता। बिन्दी लगाता। लिपस्टिक लगाता। शीशे में घंटो अपने आप को निहारता।"[5] एक किन्नर का शरीर एक पुरूष रूपी शरीर में बढ़ी हुई औरत का शरीर होता है जो बढ़ती हुई उम्र के साथ बाहर आने के लिए छटपटाने लगती है यही छटपटाहट विनीत के रूप में देखने को मिलता है।

महेन्द्र भीष्म द्वारा लिखित उपन्यास 'किन्नर कथा' की मुख्य पात्र 'तारा' अपने हिंजड़ा होने की पीड़ा कुछ इस प्रकर व्यक्त करती है– "भगवान मेरे साथ अन्याय क्यों किया? मैं हिजड़ा हूँ तो इसमे मेरा क्या कसूर ? मुझ निर्दोष का किस बात की सजा मिल रही है? मेरा अपना कौन है? घर–बार, माँ–बाप, भाई–बहन, बच्चे कोई नहीं है मेरा, जिसे मैं अपना कह सकूँ, सब कुछ होते हुए भी कोई मुझसे रिश्ता नहीं रखना चाहता, कोई मुझे अपनाने को तैयार नहीं है। बचपन से आज तक बस अपने–आप में ही दर्द पीते हैं। दूसरों को हँसाते आये हैं उनकी खुशियों में शरीक होते आये हैं, आशीष के सिवा कोई किसी को कुछ नहीं दिया, ईश्वर से बस एक शिकायत है। आखिर क्यूँ उसने हमें ऐसा बनाया? क्यों हिंजड़ा होने का दण्ड दिया? काश ! हम भी औरो की भांति स्त्री या पुरूष होते, हिजड़ा होना कितनी बड़ी सजा है। यह कोई हिजड़ा ही समझ सकता है, दूसरा कोई कभी नहीं।"[6] उपर्युक्त पंक्तियों में किन्नरों की असीम पीड़ा दिखाई देती है। एक किन्नर होना मतलब सभी पारिवारिक एवं सामाजिक रिश्तों का समाप्त हो जाना है।

किन्नरों के प्रति सामाजिक अवहेलना निश्चित ही अत्यन्त दुःखद है। निर्मला भुराड़िया ने अपने उपन्यास 'गुलाम मंडी' में इस अवहेलना का चित्रण कुछ इस प्रकार किया है, "बचपन से देखती आयी हूँ। उन लोगों के प्रति समाज में तिरस्कार को, जिन्हें प्रकृति ने तयशुदा जेंडर नहीं दिया। इसमें उनका क्या दोष है? ये क्यों हमेशा त्यागे गये, सताये गये और अपमान के भागी बने, इन्हें हिजड़ा, किन्नर, बृहन्नला कई नामों से पुकारा जाता है, मगर हमेशा तिरस्कार के साथ ही क्यों? आखिर में बाकी इंसानों की तरह मानवीय गरिमा के हकदार क्यों नहीं?"[7] इस वर्ग से जुड़े मनुष्य की उपेक्षा समाज में इस प्रकार होती है कि एक सामान्य पुरूष में भी यदि कुछ कमी हो तो उसे हिजड़ा कहकर संबोधित किया जाता है।

किन्नर वर्ग की समस्याओं के बारे में सुधीश पचौरी ने लिखा है– "असामान्य लिंगी होने के साथ ही समाज के हाशिये पर धकेल दिये गये, इनकी सबसे बड़ी समस्या आजीविका है जो इन्हें अन्ततः इनके समुदायों में ले जाती है। इनका वर्जित लिंगी होने का अकेलापन 'एक्स्ट्रा' है और वही इनकी जिंदगी का निर्णायक तत्व है। अकेले–अकेले बहिष्कृत ये किन्नर आर्थिक रूप से भी हाशिये पर डाल दिये जाते हैं। कल्चरल तरीके से 'फिक्स' कर दिये जाते हैं। यह जीवन शैली की लिंगीयता है जिससे स्त्री लिंगी–पुलिंगी मुख्य धाराऍ हैं जो इनको दबा देती हैं। नपुंसक लिंगी कहॉ, कैसे जिऍगे? समाज का सहज स्वीकृत हिस्सा कब बनेगे?"[8]

चित्रा मुद्‌गल का 'पोस्ट बॉक्स नं.203 नाला सोपारा' मुम्बई के एक खाते पीते परिवार के बच्चे विनोद की कहानी है। विनोद जन्म से ही जननांग की विकृति का शिकार है। उससे बड़ा भाई और छोटा भाई पूरी तरह से सामान्य है। विनोद के पिता की एक किराने की दुकान है और मॉ वन्दना विनोद की शारीरिक विकृति के कारण उसके प्रति कुछ ज्यादा ही प्यार और दुलार रखती है। विनोद इस बात से अनजान था कि वह और बच्चों से अलग है। जैसे–जैसे वह बड़ा हुआ तो उसके साथ खेलने वाले बच्चों से यह ज्ञात होता है कि वह और बच्चों से अलग है। एक दिन वह बच्चों के साथ खेल कर घर लौटा तो मॉं से पूछ बैठा' मेरे नुन्नू क्यों नहीं है बा?' यह सवाल ही इस पूरे उपन्यास का केन्द्रीय सवाल है जो विनोद उर्फ बिन्नी उर्फ विमली के माध्यम से उपन्यास के साथ–साथ पूरी सामाजिक संरचना के आगे एक भयावह आकार लेते हुए सामने खड़ा दिखाई देता है। "मेरी सुरक्षा के लिए कानूनी कार्यवाही क्यों नहीं की तूने, मेरी बा, तूने और पापा ने मिल कर मुझे कसाइयों के हाथ मासूम बकरी सा सौंप दिया, जिस नरक में तूने और पप्पा ने धकेला है मुझे, वह एक अंधा कुऑ है, जिसमें सिर्फ सॉप–बिच्छू रहते हैं। सॉप–बिच्छू बन कर पैदा नहीं हुए होंगे। बस इस कुऍ ने उन्हें आदमी नहीं रहने दिया। "[9]

उपन्यास में विनोद और बिन्नी द्वारा मॉ को लिखे गये पत्र का एक–एक शब्द किन्नर जीवन की नारकीय स्थिति की भयावहता को स्पष्ट करता है। विनोद उर्फ बिन्नी यहॉ पर समाज के सामने सवाल खड़ा करता है कि आखिर एक लैंगिक रूप से

IJARSCT

ISSN (Online) 2581-9429

International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology (IJARSCT)

IJARSCT
Impact Factor: 6.252

Volume 2, Issue 8, May 2022

विकलांग बच्चे को समाज क्यों त्याग देता है? क्या महज इस वजह से कि वह प्रजनन नहीं कर सकता? जबकि वहीं एक शारीरिक रूप से विकलांग बच्चे को स्वीकार करता है जबकि वह विकलांग बच्चा कभी–कभी समाज के निर्माण में किसी प्रकार की भूमिका निभा पाने में सक्षम नहीं हो पाता है लेकिन एक लैंगिक रूप से विकलांग बच्चा शारीरिक और मानसिक स्तर से पूर्ण होता है, जिससे वह समाज के निर्माण में अपनी भूमिका अदा कर सकता है लेकिन वर्षो से रूढ़ियों से ग्रसित लिंग पूजक समाज पुरूषत्व के नशे में स्वीकार नहीं कर पाता ।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि किन्नर समुदाय आज भी समाज के हाशिये पर खड़ा हुआ एक तिरस्कृत एवं तिरोहित समुदाय है। समाज उन्हें (किन्नर) उनके मानवीय अधिकार भी नहीं देना चाहता। आजादी के इतने वर्षो बाद भी हमारे समाज की मानसिकता किन्नर समाज के प्रति नकारात्क ही है। इन 70 वर्षो में हम विकास के दावे तो बहुत करते हैं पर अपनी सामाजिक संरचना एवं सोच को इस लायक भी नहीं बना पाये कि वर्षो से हाशिये में पड़े लोग या समुदाय को मुख्यधारा में शामिल कर सकें। फिर चाहे वह दलित हो, आदिवासी हो या किन्नर ही क्यों न हो? हालांकि पिछले 5–6 वर्षो में समाज के बौद्धिक तबको का नजरिया कुछ हद तक बदला है, जिसका एक कारण सर्वोच्च न्यायालय द्वारा किन्नर समुदाय के हक में दिये गये कुछ फैसले भी हैं। जिसमें सबसे महत्वपूर्ण बात किन्नर समुदाय को 'थर्ड जेन्डर' के रूप में मिली एक नई पहचान भी है। समाज की यथास्थितिवादी और परम्परावादी सोच को बदलने के प्रमुख आयामों में से एक साहित्य भी है। आज साहित्य में छोटे स्तर पर ही सही पर किन्नर समुदाय को केन्द्रित करते हुए एक नई बहस की शुरूआत हुई है। हम उम्मीद कर सकते हैं कि यह बहस आगे चल कर एक विमर्श का रूप लेगी। जिससे किन्नर समुदाय के हक–हकूक की लड़ाई में साहित्य एक सशक्त एवं सक्षम साधन बन कर उभरेगा।

संदर्भ सूची

01. हिजड़ा–2 – कृष्ण मोहन झा।
02. चॉदनी फिल्म से, निर्देशक : रियाज–उल–हक
03. वही
04. वही
05. प्रदीप सौरभः तीसरी ताली वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली पृ. 82
06. भीष्म महेन्द्रः 'किन्नर कथा' सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.64
07. निर्मलाः भुराड़िया 'गुलाम मंडी–, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.07
08. प्रदीप सौरभ : 'तीसरी ताली ', वाणी प्रकाशन , नई दिल्ली कवर पेज से
09. चित्रा मुदगल :' पोस्ट बाक्स नं. 203 नाला सोपारा, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.11